International Advance Journal of Engineering, Science and Management (IAJESM)
Multidisciplinary, Indexed, Double Blind, Open Access, Peer-Reviewed, Refereed-International Journal.
SJIF Impact Factor =7.938, July-December 2024, Submitted in November 2024, ISSN -2393-8048

भारतीय परम्परागत बाज़ार व्यवस्था पर ब्रिटिश कालीन पारगमन कर प्रणाली (BITDS) का प्रभाव :- एक ऐतिहासिक अध्ययन

Prof.(Dr.) Anant Prasad Gupta, Department of History, Purnea University, Purnea, anantgupta943@gmail.com

परिचय

इस पेपर का मुख्य उद्देश्य यह दिखाना है कि कैसे लगभग सौ वर्षों तक ब्रिटिश इंडिया ट्रांज़िट ड्यूटी सिस्टम (BITDS) ने ब्रिटिश भारत को ब्रिटिश व्यापारियों और ब्रिटेन में निर्मित उत्पादों के लिए एक संरक्षित बाजार में बदल दिया। यह पेपर यह भी दर्शाता है कि BITDS भारत में व्यापार और उद्योग के विकास के लिए प्री-ब्रिटिश भारत में लागू इनलैंड ट्रांज़िट ड्यूटी सिस्टम की तुलना में अधिक हानिकारक था।

इस पेपर में प्रयुक्त कुछ शब्दों, आधारभूत स्रोतों और ऐतिहासिक संदर्भों के बारे में कुछ स्पष्टीकरण आवश्यक हैं, जो इसे विशेष प्रासंगिकता प्रदान करते हैं। सबसे पहले, यहाँ "ट्रांज़िट ड्यूटी" शब्द को "कस्टम ड्यूटी" की तुलना में प्राथमिकता दी गई है, हालांकि स्रोतों में अक्सर भारत के इनलैंड व्यापार पर लगाए गए करों का वर्णन करने के लिए "कस्टम ड्यूटी" शब्द का उपयोग किया गया है। कथित रूप से, ब्रिटिश इन शब्दों में भ्रम deliberately पैदा करते थे ताकि भारत के इनलैंड व्यापार पर वही छूट लागू की जा सके, जो उन्होंने भारत के विदेशी व्यापार पर कस्टम ड्यूटी के भुगतान में स्थानीय भारतीय शासकों से प्राप्त की थी। वास्तव में, इसके अलावा कोई स्पष्ट कारण नहीं है कि क्यों एक ही संप्रभु क्षेत्र के भीतर माल पर लगाए गए करों को "कस्टम ड्यूटी" कहा गया।

दूसरे, ट्रांज़िट ड्यूटी सिस्टम पर चर्चा "टाउन ड्यूटीज़" प्रणाली के बिना अधूरी रहेगी, जो केवल शहरी क्षेत्रों में प्रवेश करने वाले माल पर लागू होती थी।

तीसरे, हालांकि इस पेपर में प्रयुक्त डेटा मुख्यतः बंगाल और ब्रिटिश भारत के अपर प्रोविन्स से संबंधित हैं, इसे छोटे स्थानीय भिन्नताओं के साथ पूरे ब्रिटिश भारत पर लागू माना जा सकता है।

चौथे, इस पेपर में प्रयुक्त डेटा मुख्य रूप से 1810 में लागू किए गए ट्रांज़िट ड्यूटी सिस्टम से संबंधित हैं। इसके बावजूद, इन डेटा के आधार पर निष्कर्षों का उपयोग 1810 से पूर्व के ट्रांज़िट ड्यूटी सिस्टम के बारे में अनुमान लगाने के लिए किया जा सकता है, क्योंकि बोर्ड ऑफ कस्टम्स के न्यायादेश के अनुसार, 1810 में लागू BITDS, अपने पूर्ववर्ती की तुलना में भारतीय व्यापार और उद्योग के लिए "कम विनाशकारी" था।

पाँचवे, इस पेपर में प्रयुक्त डेटा मुख्यतः चार्ल्स ट्रेवल्यान की रिपोर्ट से लिए गए हैं। इस रिपोर्ट की प्रशंसा करते हुए, मैकाले ने लिखा, "सार्वजनिक मामलों में मेरा अनुभव होने के बावजूद, मैंने कभी ऐसा सक्षम राज्य पत्र नहीं पढ़ा, और मुझे विश्वास नहीं कि भारत में ही नहीं, बल्कि इंग्लैंड में भी कोई अन्य 27 वर्षीय व्यक्ति इसे लिख सकता था।"

हालाँकि, यह रिपोर्ट निस्संदेह एक बहुत ही मूल्यवान स्रोत है, इसे इस शैली में प्रस्तुत किया गया है जिसमें तथ्यात्मक विवरण, नैतिक आक्रोश की अभिव्यक्तियाँ और एडम स्मिथ तथा बाइबिल जैसे विभिन्न प्राधिकरणों के उद्धरण आपस में बदलते रहते हैं। यह रिपोर्ट अत्यंत पुनरावर्ती है और यह कहना कोई अतिशयोक्ति नहीं कि रिपोर्ट के किसी भी बीस पृष्ठों में, इस पेपर में उद्धृत सभी अंशों के बराबर सामग्री होती है। इसलिए, इस पेपर को ऐसे फुटनोट्स से भारित करना आवश्यक नहीं है जो पाठक को रिपोर्ट के विशेष पृष्ठों की ओर निर्देशित करें जिनसे उद्धृत अंश लिए गए हैं।

छठा, जब तक अन्यथा उल्लेख न किया गया हो, इस पेपर में उल्लिखित ड्यूटी के प्रतिशत दरें *एड वैलेरम (ad valorem)* दरें हैं।

सातवाँ, BITDS पर चर्चा में स्वाभाविक रूप से समकालीन भारत में परिवहन पर चर्चा भी शामिल होनी चाहिए।

अंततः, यह ध्यान देने योग्य है कि BITDS ब्रिटिश साम्राज्यवाद के भारत में व्यापारी और औद्योगिक बुर्जुआ युग दोनों को आच्छादित करता था क्योंकि इस प्रणाली ने इन दोनों हितों का उत्कृष्ट सहजीवन प्रदान किया। व्यापारी बुर्जुआ युग के दौरान, BITDS ने गैर-ब्रिटिश व्यापारियों द्वारा किए गए व्यापार के माल के खिलाफ भेदभाव करने का काम किया। जबकि BITDS का यह पक्ष अधिकांशतः अपरिवर्तित रहा, औद्योगिक बुर्जुआ युग के आगमन ने इसमें एक नया पहलू जोड़ा कि अब यह प्रणाली ब्रिटेन में निर्मित उत्पादों के पक्ष में और उनके भारत निर्मित विकल्पों के खिलाफ भेदभाव करने लगी।

कालक्रम (The Chronology)

BITDS का इतिहास लगभग 1757 में शुरू हुआ और 1848 में समाप्त हुआ कहा जा सकता है। 15 जुलाई, 1757 को बंगाल के नवाब मीर जाफर ने ब्रिटिशों को सभी करों (ड्यूटीज़) से मुक्त करने का आदेश (सन्नूद) जारी किया (देखें परिशिष्ट)। यद्यपि ब्रिटिशों ने पहले भी इसी तरह के आदेश प्राप्त किए थे, यह विशेष आदेश इसलिए अनूठा था क्योंकि इसे ब्रिटिशों ने **कूटनीति के माध्यम से नहीं बल्कि हथियारों की शक्ति से** प्राप्त किया। BITDS का अंत 1848 तक नहीं आया, जब ब्रिटिश भारत एक ऐसा बाजार बन गया जो ट्रांजिट ड्यूटी बाधाओं से अविभाजित था।

1762 में मीर जाफर के उत्तराधिकारी मीर क़ासिम ने गैर-ब्रिटिश व्यापारियों के खिलाफ भेदभाव को समाप्त करने का प्रयास किया और सभी व्यापारियों को ट्रांजिट ड्यूटी से छूट देने की घोषणा की। 1763 में उन्होंने अपना सिंहासन खो दिया। यह प्रतीत होता है कि यह किसी भारतीय शासक द्वारा BITDS का विरोध करने का अंतिम महत्वपूर्ण प्रयास था।

1793 तक, BITDS की निगरानी **कस्टम बोर्ड** द्वारा की जाती थी, जो ब्रिटिश भारत सरकार के राजस्व विभाग के अधीन था। 1793 के बाद, इस बोर्ड को उस सरकार के **वाणिज्य विभाग** के अधीन कर दिया गया। बोर्ड के पास ब्रिटिश भारत के विभिन्न स्थानों पर "कस्टम हाउस" थे, और प्रत्येक कस्टम हाउस के अधीन सबसिडियरी चेक पोस्ट थे। कस्टम हाउस का उद्देश्य ड्यूटी लगाना और "रोवन्नाह" नामक क्लीयरेंस पत्र जारी करना था, जबकि चेक पोस्ट का उद्देश्य यह देखना था कि ट्रांज़िट में वस्तुएँ रोवन्नाह में बताए गए विवरणों के अनुसार हैं या नहीं। इस प्रणाली के कामकाज का विवरण बाद में इस पेपर में दिया गया है।

ऐसा प्रतीत होता है कि ब्रिटिशों द्वारा भारत में स्वेच्छा से ट्रांजिट ड्यूटी लागू करने का पहला मामला 1773 में हुआ, जब भूमि या जल मार्ग से जाने वाले सभी माल पर 2.5 प्रतिशत ड्यूटी लगाई गई, इसके अतिरिक्त उस समय लागू नगर ड्यूटी भी बनी रही।

1788 में, गवर्नर जनरल कॉर्नवालिस ने सभी ट्रांजिट ड्यूटी समाप्त कर दी और केवल मंजी कस्टम हाउस बनाए रखा, जो बनारस और अवध के साथ व्यापार के लिए था, जो तब गैर-ब्रिटिश क्षेत्र थे। 1793 में, ट्रांजिट ड्यूटी को फिर से लागू किया गया और जैसा कि पहले उल्लेख किया गया, इन ड्यूटी की प्रशासनिक जिम्मेदारी **राजस्व विभाग** से **वाणिज्य विभाग** को सौंप दी गई। यह कदम इस सिद्धांत का समर्थन करता है कि BITDS मूल रूप से एक **व्यापारिक हथियार** था, न कि सरकार के लिए राजस्व का साधन।

1800 में न्यूनतम ड्यूटी 2.5 प्रतिशत से बढ़ाकर 3.5 प्रतिशत कर दी गई। 1801 में, निचली प्रांतों में ड्यूटी न्यूनतम 8.25 प्रतिशत और उच्च भारत के अधिग्रहित क्षेत्रों में अधिकतम 42.5 प्रतिशत थी। 1804 तक, सभी प्रमुख शहरों में "कस्टम हाउस" स्थापित हो गए थे। 1809 में, **कोलब्रुक-लम्सडेन समिति (Colebrooke-Lumsden Committee)** को एक नई ट्रांजिट ड्यूटी प्रणाली बनाने के लिए नियुक्त किया गया, जिसका घोषित उद्देश्य राजस्व बढ़ाना था।

नया **ब्रिटिश इंडिया ट्रांजिट ड्यूटी सिस्टम (BITDS)** 1810 में लागू हुआ और इसे पूरी तरह से समाप्त होने तक, 1848 तक प्रभावी रहा। उस समय भारत में निम्नलिखित स्थानों पर "कस्टम हाउस" मौजूद थे: आगरा, इलाहाबाद, बालासोर, बनारस, कोलकाता, ढाका, फ़र्रुखाबाद, हुगली, कानपुर, मेरठ, मिर्ज़ापुर, मुर्शिदाबाद और पटना। 1812 तक, गाज़ीपुर और बरेली में भी "कस्टम हाउस" स्थापित हो गए थे।

1811 में विदेशी, अर्थात् गैर-ब्रिटिश और गैर-भारतीय जहाज़ों को भारत के तटीय व्यापार से बाहर रखा गया और विदेशी जहाज़ों पर माल पर लगने वाली ड्यूटी को आम तौर पर ब्रिटिश जहाज़ों पर लगने वाली दरों से दोगुना कर दिया गया।

1815 में, भारत में आयात होने वाले सभी ब्रिटिश उत्पादों पर कस्टम ड्यूटी या तो समाप्त कर दी गई या 2.5 प्रतिशत तक घटा दी गई। प्रमुख वस्तुओं में, ब्रिटिश कपास वस्त्रों (cotton textile products) पर 2.5 प्रतिशत कस्टम ड्यूटी लगेगी, जबकि भारत से ब्रिटेन निर्यात होने वाले भारतीय कच्चे कपास (raw cotton) पर पहले चुकाई गई ड्यूटी का रिफंड (drawback) दिया जाएगा।

1823 में, भारतीय कपास उत्पादों पर ट्रांजिट और कस्टम ड्यूटी को अधिकतम 7.5 प्रतिशत से घटाकर स्थिर दर 2.5 प्रतिशत कर दिया गया। हालांकि, यदि ये उत्पाद विदेशी जहाज़ों में यूरोप के बाहर निर्यात किए जाते, तो इन पर अतिरिक्त 2.5 प्रतिशत ड्यूटी लागू होती।

Bengal में BITDS को 1836 में बंद कर दिया गया। बारह साल बाद, यह प्रणाली पूरी तरह से समाप्त कर

दी गई और ब्रिटिश भारत पहली बार **एकल बाजार (single market)** बन गया, जहाँ कोई ट्रांजिट ड्यूटी बाधाएँ नहीं रहीं जो इसे कई छोटे बाजारों में बाँटतीं।

BITDS का विशेष प्रभाव (The Peculiar Impact of the BITDS)

BITDS का भारतीय व्यापार और उद्योग पर जो विशेष प्रभाव पड़ा, उसे केवल **पूर्व-ब्रिटिश भारत के ट्रांजिट ड्यूटी सिस्टम** के प्रभाव के साथ तुलना करके ही समझा जा सकता है। पूर्व-ब्रिटिश भारत की प्रणाली पर डेटा मिलना कठिन है, लेकिन **चार्ल्स ट्रेवलियन (Charles Trevelyan)** के प्रयासों के कारण इन दोनों प्रणालियों के बीच के व्यवस्थित अंतर को विश्वसनीय रूप से बताया जा सकता है।

पूर्व-ब्रिटिश प्रणाली के तहत, लगाई गई ट्रांजिट ड्यूटी यात्रा की दूरी के अनुपात में थी, जबकि **BITDS** में ड्यूटी **फिक्स्ड रेट** के रूप में लगाई जाती थी, जो यात्रा की शुरुआत में ही चुकानी होती थी, चाहे यात्रा कितनी भी लंबी या छोटी हो। दूसरे शब्दों में, छोटे व्यापारी जो पड़ोसी क्षेत्रों या गाँवों के बीच व्यापार करते थे, उन्हें वही ड्यूटी चुकानी पड़ती थी जो बड़े व्यापारी, जो दूर-दराज़ के क्षेत्रों के बीच व्यापार करते थे, चुकाते थे।

"प्रेसीडेंसी के अधिकांश व्यापार का संचालन शहर और गाँव, पड़ोसी जिलों और एक ही जिले के विभिन्न हिस्सों के बीच होता है... निवासियों की आवश्यकताएँ मुख्य रूप से घरेलू व्यापार से पूरी होती थीं, जो नए नियमों से अत्यधिक प्रभावित हुई, जबकि विदेशी व्यापार इससे कोई राहत नहीं पाता।"

1832 में, मेरठ के "कस्टम हाउस" ने 867 वस्तुओं को जब्त करने की रिपोर्ट दी, जिनमें से केवल लगभग 11 प्रतिशत वस्तुएँ थोक व्यापारियों की थीं। कुल जब्ती की मूल्यांकन राशि ₹112,074.75 थी, लेकिन 48 प्रतिशत वस्तुएँ ₹10 से कम की थीं और लगभग 90 प्रतिशत वस्तुएँ ₹100 या उससे कम मूल्य की थीं।

कस्टम हाउस ने जब्त की गई वस्तुओं में से 17 प्रतिशत को जब्त रखा, 6 प्रतिशत पर डबल ड्यूटी लगाई, 24 प्रतिशत पर एकल ड्यूटी लगाई और शेष 53 प्रतिशत को छोड़ दिया। रिकॉर्ड में यह नहीं बताया गया कि किस स्तर के व्यापार के लिए कितनी दंड राशि लगी, और यह भी नहीं कि जिन व्यापारियों को "छोड़ा" गया, उन्होंने अपनी छूट के लिए ट्रांजिट ड्यूटी अधिकारियों को रिश्वत दी या नहीं।

फिर भी यह स्पष्ट है कि लगभग 90 प्रतिशत जब्तियां **सामान्य लोगों के छोटे-छोटे लेन-देन** से संबंधित थीं, जैसे एक मोटा कंबल या आधे रुपये के तेल जैसी वस्तुएँ जो गरीब अपने परिवार के लिए ले जाता है। ट्रेवलियन ने नोट किया कि वास्तविक जब्तियों की संख्या रिपोर्ट की गई संख्या से कहीं अधिक थी, इसलिए मेरठ का डेटा BITDS के भारतीय व्यापार पर नकारात्मक प्रभाव का केवल एक छोटा नमूना है।

दिल्ली के कमिश्नर विलियम फ्रेज़र ने लिखा:

"किसी अन्य देश में इस प्रकार का कोई वित्तीय नियम कभी नहीं सुना गया, केवल ब्रिटिश भारत में... एक गधा भार बीज का तेल गाँव से गाँव तक बिना ड्यूटी चुकाए नहीं जा सकता, और यदि डबल ड्यूटी या जब्ती का खतरा हो, तो अधिकांश मामलों में वाहक अपने माल को छोड़ देना पसंद करेगा बजाय इसके कि उसके लिए इसकी फिरौती चुकाए।" (मूल में जोर)

साथ ही यह ध्यान देने योग्य है कि BITDS केवल छोटे पैमाने के भारतीय व्यापार को ही नहीं, बल्कि पूरे भारतीय व्यापार को नष्ट करने वाला था। जैसा कि **हॉल्ट मैकेंजी** ने कहा,

"मान लें कि कोई अतिरिक्त ड्यूटी या देरी नहीं भी होती, तब भी यह प्रणाली देश के व्यापारिक संबंधों में गंभीर बाधा डालती, क्योंकि किसी जिले से दूसरे जिले में सामान का आदान-प्रदान केवल तभी संभव होता है जब चोकी (check posts) की लाइन के कारण कीमत के अंतर में न केवल परिवहन और अन्य शुल्क शामिल हों, बल्कि सरकार द्वारा लगाई गई 5 या 7.5 प्रतिशत (या अधिक) ड्यूटी भी शामिल हो।"

जहाँ पूर्व-ब्रिटिश प्रणाली के तहत केवल माल के ट्रांजिट पर ड्यूटी लगाई जाती थी, वहीं **BITDS** के तहत **यात्रियों द्वारा व्यक्तिगत उपयोग के लिए ले जाए जाने वाले उपभोक्ता सामानों** पर भी ड्यूटी लगाई जाती थी। व्यक्तिगत वस्तुओं जैसे माला, जपमाला, कंबल, हुक्का, हुक्का-पाइप, तलवार, कस्तूरी और गुलाबजल पर अलग से ड्यूटी लगाई जाती थी, हालांकि इन वस्तुओं से होने वाली आय हमेशा BITDS की कुल आय के मुकाबले नगण्य बताई जाती थी।

आमतौर पर, धातुओं पर लगाई गई ड्यूटी में बर्तन, ताले, ब्लो, हुक्का-स्टिक आदि शामिल होते थे, जबकि लकड़ी पर ड्यूटी सभी फर्नीचर और नावों पर भी लगाई जाती थी। यात्रियों को अपनी यात्रा के दौरान

खरीदी गई कपड़ों पर भी ड्यूटी चुकानी पड़ती थी और सभी यात्रियों को ट्रांजिट ड्यूटी अधिकारियों को यह साबित करना पड़ता था कि उनके द्वारा पहने गए कपड़े "नए खरीदे हुए" नहीं हैं।

ट्रेवलियन ने एक तीर्थयात्रा की शिकायत को उदाहरण के रूप में उद्धृत किया, जिसकी नाव को **कोलकाता से बनारस तक 29 स्थानों पर रोका और तलाशी ली गई**। इस तीर्थयात्रा के अनुसार, BITDS अधिकारियों ने उससे कुल ₹83.03 वसूले, और यह कई अन्य अपमानजनक घटनाओं के अलावा था, जिनका सामना उसे और उसके परिवार को करना पड़ा। सभी उपलब्ध दस्तावेजों के संदर्भ में यह आरोप असामान्य नहीं माना जा सकता।

इस प्रकार, BITDS न केवल गैर-ब्रिटिश व्यापारियों द्वारा बेचे गए माल की कीमतों पर अतिरिक्त शुल्क था, बल्कि यह **यात्री भारतीय उपभोक्ताओं पर एक कर** भी था।

पूर्व-ब्रिटिश प्रणाली में किसी वस्तु के उत्पादन के विभिन्न चरणों के आधार पर ड्यूटी में कोई भिन्नता नहीं थी, जबकि BITDS में **विभिन्न उत्पादन चरणों पर अलग-अलग दरें लागू की गईं**, जिससे भारतीय विनिर्माण उद्योगों को हतोत्साहित किया गया। उदाहरण के लिए:

- कच्चे कपास पर केवल 2.5% ड्यूटी लगती थी, और यदि इसे ब्रिटेन निर्यात किया जाता तो ड्यूटी में छूट मिलती थी।
- उसी कपास से कताई की गई सूत पर 7.5% अतिरिक्त ड्यूटी लगती थी।
- यदि सूत से कपड़ा बुना जाता, तो उस पर 5% ड्यूटी लगती।
- यदि कपड़ा रंगा जाता, तो रंगे कपड़े पर फिर 5% ड्यूटी लगती।

इस प्रकार, कुल मिलाकर कपड़ा उत्पादक लगभग **20% तक ड्यूटी के दायरे में आते थे**। इसी तरह, कच्ची चमड़ा और तैयार चमड़ा उत्पादों पर 5% अलग-अलग ड्यूटी लगाई जाती थी। इसी सिद्धांत को शॉल, चीनी, शेलाक, पोटाश, तेल आदि पर भी लागू किया गया।

सैद्धांतिक रूप से, यह कराधान **उत्पादन के ऊर्ध्वाधर एकीकरण (vertical integration)** को प्रोत्साहित करता ताकि निचले उत्पादन चरणों में लगने वाले कर से बचा जा सके। लेकिन पूंजी की कमी और अन्य समस्याओं के कारण यह व्यावहारिक नहीं था, और BITDS ने **पूरे उत्पादन उद्योग को हतोत्साहित किया**।

ट्रेवलियन ने लिखा:

"यह लगभग अविश्वसनीय लगेगा कि एक ऐसी प्रणाली, जो केवल बर्बरता के समय की हो, हमारे द्वारा जानबूझकर स्थापित और दृढ़ता से पालन की गई। यदि भारतीय उद्योग की उत्पादन क्षमता को अधिकतम संभव हद तक दबाना उद्देश्य होता, तो इससे अधिक प्रभावी कोई योजना बनाई जा सकती थी क्या? यदि हम हमारे देश के विभिन्न जिलों के बीच दलदल या पहाड़ खड़ा करें, तो भी हम अपने उद्योग को इस योजना की तुलना में उतनी प्रभावी तरह से प्रभावित नहीं कर सकते।"

BITDS का प्रभाव उन उत्पादों पर और भी अधिक था, जो **टाउन ड्यूटी** के दायरे में आते थे। यदि कोई उत्पादक टाउन ड्यूटी चेक-पोस्ट के भीतर फैक्ट्री स्थापित करना चाहता था, तो उसे 5% टाउन ड्यूटी चुकानी पड़ती थी। यदि वह अपनी उत्पादन वस्तुओं को चेक-पोस्ट के बाहर निर्यात करता, तो उस पर 10% तक अतिरिक्त ड्यूटी लगती।

"स्पष्ट परिणाम यह है कि टाउन ड्यूटी के दायरे में आने वाले किसी भी उत्पाद का उत्पादन केवल कोलकाता के लिए ही संभव था, और तब भी सभी लाभ जो मशीनरी और पूंजी की आवश्यकता वाले उद्योगों को मिल सकते थे, विफल हो जाते थे। यह स्थिति यूरोपीय मशीनरी के व्यापक उपयोग को असंभव बनाती थी।"

टाउन ड्यूटी केवल **चीनी, तेल बीज, हल्दी, नमक, पान के बीज, तंबाकू और दालों** पर लगाई जाती थी, लेकिन पूरे शहरी व्यापार और उद्योग पर इसका असर पड़ा क्योंकि "**आठ उपभोक्ता वस्तुओं पर ड्यूटी लगाने के लिए, उनके पूरे उपभोग और उनके व्यापार के सभी सौ से अधिक वस्तुओं और यात्रियों को तलाशी की शत्रुता का सामना करना पड़ता था।**"

(मूल पर जोर) 1831 में, **कोलकाता के 29 व्यापारी—सभी यूरोपीय**—ने कस्टम बोर्ड के सचिव से उस प्रणाली के खिलाफ याचिका दायर की, जो उनके अनुसार सरकार के लिए लाभकारी नहीं थी, बल्कि भारत में विनिर्माण उद्योगों के लिए विनाशकारी थी। ऐसा प्रतीत होता है कि कभी-कभी विशेष उदाहरण भी मिलते थे, जैसे ब्रिटिश चीनी निर्माता **ब्लेक** को भारतीय चीनी उत्पादकों की तुलना में विशेषाधिकार प्राप्त था।

हालाँकि, समग्र रूप से BITDS स्पष्ट रूप से भारत में विनिर्माण उद्योगों के विकास के लिए हतोत्साहक था, चाहे ये उद्योग ब्रिटिशों के स्वामित्व में हों या भारतीयों के। ट्रेवलियन ने यह इंगित किया कि:

"ग्रेट ब्रिटेन के कपास उत्पादों की कीमत 1814 के बाद लगभग आधी हो गई है, और यह दिखाने के लिए किसी तर्क की आवश्यकता नहीं है कि यदि मैनचेस्टर को शुरू में केवल अपने शहर की आपूर्ति तक सीमित कर दिया गया होता, जैसे इस देश के शहरों के मामले में होता, तो ऐसा कभी नहीं हो सकता था।"

यह कराधान प्रणाली **क्षेत्रीय विशेषीकरण** को हतोत्साहित करती थी और **बाजार के आकार को सीमित करके ऊर्ध्वाधर एकीकरण** को भी रोकती थी। ट्रेवलियन ने लिखा:

"इन प्रतिबंधों का नकारात्मक प्रभाव प्रत्येक व्यक्ति के लिए स्पष्ट होगा जिसने देखा हो कि कपड़ा निर्माण लगभग हर गाँव में फैला हुआ है ताकि बिना कर के कपास, ऊन और सूत का उपयोग किया जा सके। जटिल और अप्रशिक्षित प्रक्रिया, अशिक्षित मशीनरी और गरीब स्थिति यह दर्शाती है कि मांग अत्यंत सीमित है और किसी भी प्रकार की बड़ी पूंजी निवेश या प्रयास के लिए कोई प्रोत्साहन नहीं है।"

BITDS, पूर्व-ब्रिटिश ट्रांजिट ड्यूटी सिस्टम के विपरीत, जटिल और कड़ाई से परिभाषित था। पूर्व-ब्रिटिश ट्रांजिट ड्यूटी स्थापित प्रथाओं पर आधारित थी और इसे एक "हल्का शुल्क" माना जाता था, जैसे "गधा भार" या "गाड़ी भर"। ड्यूटी वजन के आधार पर लगाई जाती थी, मूल्य के आधार पर नहीं। उदाहरण के लिए, कच्चे कपास की एक गाड़ी पर वही ड्यूटी लगती थी जो कपड़ों की एक गाड़ी पर लगती थी।

इसके विपरीत, BITDS ने **"रोवाना" (rowannahs)** नामक पास प्रणाली शुरू की, जिसमें माल के मूल्य, मात्रा, गुणवत्ता, पैकेजों की संख्या और अन्य विवरण दर्ज होते थे। इस प्रणाली के भारतीय अर्थव्यवस्था पर विनाशकारी प्रभाव पड़े।

1. अधिकांश भारतीय व्यापारी निरक्षर और छोटे पैमाने पर कार्यरत थे, जो माल को प्राचीन नावों, पशु पीठ और अन्य साधारण साधनों से ले जाते थे। ऐसे में **rowannah खो जाने, खोखला होने, बिगड़ने या गलत व्याख्या होने का जोखिम बहुत बड़ा था।** ट्रेवलियन ने कई ऐसे उदाहरण बताए, जहाँ व्यापारियों को इसी कारण दोहरी ड्यूटी चुकानी पड़ी।
2. माल को यात्रा के किसी भी चरण में rowannah में वर्णित विनिर्देशों के अनुसार होना चाहिए था; किसी भी असंगति पर न केवल चेक-पोस्ट पर बल्कि जहां भी यह पता चलता, दंड लगाया जाता।
3. पूर्व-ब्रिटिश प्रणाली के विपरीत, अब व्यापारियों को यात्रा शुरू करने से पहले औपचारिक **rowannah** प्राप्त करना आवश्यक था। उदाहरण के लिए, हरिद्वार मेला जाने वाले व्यापारियों को अपने माल को हरिद्वार से ले जाने से पहले मेरठ के कस्टम हाउस जाना पड़ता था, जो सौ मील से अधिक दूर था।
4. पूर्व-ब्रिटिश प्रणाली के विपरीत, चेक-पोस्ट अधिकारी अब केवल rowannah की जांच के लिए जिम्मेदार थे; ट्रांजिट ड्यूटी वसूलना उनका कार्य नहीं था। यदि rowannah अस्वीकार्य पाया जाता, तो अधिकारी माल का नमूना लेकर सार्वजनिक न्यायालय में जांच कर सकते थे। व्यापारियों के साथ दुराचार की सजा आमतौर पर **दोहरी ड्यूटी या माल जब्ती** होती थी।
5. rowannah की वैधता केवल **एक वर्ष** के लिए थी, जिसके अंत तक इसे नवीनीकरण के लिए 0.5% नई ड्यूटी चुकानी पड़ती थी।

उस समय माल को छोटे पैकेजों में केंद्रीय बाजार में भेजा जाता और फिर बड़े कंसाइनमेंट में रीपैक किया जाता था। यह प्रक्रिया अब असंभव हो गई, क्योंकि पैकेजिंग में प्रत्येक बदलाव पर नई rowannah की आवश्यकता होती थी।

ट्रेवलियन ने निष्कर्ष निकाला:

"ऐसा प्रतीत होता है कि यह योजना जानबूझकर व्यापारी की स्वतंत्रता को हर चरण में बाधित करने के लिए बनाई गई थी। छोटे-छोटे निवेश से लेकर अंतिम वितरण तक, व्यापारी को अपने संचालन को न केवल बाजार की मांग और अपनी पहल के अनुसार अनुकूल करना पड़ता है, बल्कि rowannah में निर्दिष्ट माल के अनुसार भी अनुकूल करना पड़ता है; और यदि वह थोड़ी भी अति करता है, तो वह सार्वजनिक अपराधी की स्थिति में आ जाता है और सबसे कड़ी सजा के लिए उत्तरदायी बनता है।"

1757 के बाद, इस प्रकार की सुरक्षा धीरे-धीरे कम हो गई क्योंकि **गैर-ब्रिटिश विदेशी व्यापारियों की संख्या नगण्य हो गई** और व्यापार **प्रतिद्वंद्वी ब्रिटिश और भारतीय व्यापारियों के हाथों में केंद्रित** हो गया। इस संदर्भ

में, **BITDS एक स्पष्ट और प्रभावशाली राजनीतिक उपकरण** बन गया, जिसका उद्देश्य भारतीय व्यापार को **सापेक्ष रूप से अव्यवसायिक या लगभग असंभव** बनाना था।

1810 के नियमों में घोषित किया गया कि BITDS **भारत के संपूर्ण आंतरिक व्यापार पर अपवाद के बिना लागू होगा**, लेकिन वास्तविकता में, ब्रिटिश व्यापारी इस प्रणाली से अब भी मुक्त रहे। जैसा कि एक स्रोत ने लिखा, "सामान्यतः, अंग्रेज़ी व्यापार और विनिर्माण के विशेष हितों को इस देश के उचित अधिकारों की कीमत पर भी बढ़ावा दिया जाता है।"

1777 में अब्बे रेनल (Abbe Raynel) ने भारत में फ्रांसीसी व्यापार के बारे में जो कहा, वह BITDS के संचालन के दौरान भारतीय व्यापारियों पर भी लागू होता है:

"यह असंभव था कि वे अंग्रेज़ों के खिलाफ संघर्ष कर सकें, जो व्यापार के हर क्षेत्र में माहिर थे और हर स्थान पर शक्तिशाली थे, और उनकी समृद्धि से प्रेरित ढीले सिद्धांतों ने उन्हें हर प्रयास में परास्त करने की क्षमता दी।"

एक ब्रिटिश स्रोत ने कहा:

"हमारी अधिग्रहण और क्षेत्रीय शक्ति ने (भारतीय व्यापारियों) को धीरे-धीरे अपनी पूंजी निवेश की आपूर्ति में हम पर अधिक निर्भर बना दिया।"

इस निर्भरता का स्वरूप कैरी (Carey) द्वारा इस प्रकार बताया गया है:

"1792 के बाद, एम/एस होल्म्स और एलन ने नदी परिवहन व्यापार का एकाधिकार कर लिया। जिन्होंने इस कंपनी के साथ बीमा किया, उन्हें अपने व्यापारिक प्रयासों की सुरक्षित आगमन की गारंटी थी; जिन्होंने बीमा नहीं किया, उनके माल कभी गंतव्य तक नहीं पहुंचे, क्योंकि नावों पर विभिन्न स्टेशनों पर नियुक्त **चपरासी** उनके माल को अपने हिसाब से वितरित कर देते थे और केवल खाली पैकेज प्राप्तकर्ताओं को दिए जाते थे।"

ब्रिटिश झंडे की उपस्थिति, और जहाज पर ब्रिटिश व्यक्ति की उपस्थिति, पर्याप्त थी ताकि माल बिना शुल्क के यात्रा कर सके। इसी संदर्भ में, ट्रेवलियन ने सुनी कहानी की महत्ता समझ में आती है कि भारतीय व्यापारी **ब्रिटिश अधिकारियों को रोकने के लिए अपने जहाजों पर यूरोपीय कपड़ों में एक नकली व्यक्ति रख देते थे।**

ब्रिटिश ने भारतीय उत्पादों पर ब्रिटेन से आयातित उत्पादों की तुलना में **अधिक शुल्क लगाया**। ब्रिटिश सूत पर भारत में प्रवेश करने पर 2.5% आयात शुल्क था, जबकि भारत के पुराने स्थानीय सूत पर **7.5% से कम नहीं** ट्रांजिट ड्यूटी लगती थी।

1823 तक, भारत में बुने गए कपास वस्त्रों पर 7.5% तक शुल्क था, जबकि ब्रिटेन से आयातित कपड़ों पर केवल 2.5% शुल्क लगता था। 1823 में भारतीय कपास वस्त्रों पर शुल्क घटाकर 2.5% कर दिया गया, लेकिन प्रभावी शुल्क अभी भी अधिक रहा क्योंकि निर्माण के विभिन्न चरणों पर अलग-अलग शुल्क लगाने की नीति थी।

भारतीय व्यापारियों के साथ **ड्यूटी पर दिए जाने वाले ड्रा-बैक (छूट) में भी भेदभाव** किया गया। ब्रिटिश भारत से पुनः-निर्यात पर दो-तिहाई छूट दी जाती थी, लेकिन भारतीय व्यापारियों को इसका बहुत कम लाभ मिलता था, क्योंकि यह छूट उन "स्थानीय जहाजों पर लागू नहीं होती थी जिन पर पायलट या कस्टम हाउस अधिकारी मौजूद नहीं थे।"

परिवहन पर प्रभाव

1757 तक, **यूरोपीय परिवहन साधन निश्चित रूप से भारतीय साधनों की तुलना में सस्ते** थे, इसलिए व्यापारी हमेशा अपनी वस्तुएँ यूरोपीय जहाजों से भेजना पसंद करते थे, जब भी ऐसा विकल्प उपलब्ध होता। हालांकि, भारतीय व्यापारी हमेशा **उपलब्ध यूरोपीय माल की जगह के शेष अधिकारियों** के रूप में बचे रहते थे, 1811 के नियमों ने इस स्थान को और कम कर दिया क्योंकि **गैर-ब्रिटिश जहाजों को भारत के तटीय व्यापार से प्रतिबंधित** कर दिया गया।

इसलिए, लगभग **सारा स्थानीय भारतीय व्यापार** ज़मीन पर **जानवरों और जानवरों द्वारा खींचे गए गाड़ियों** से और जलमार्गों पर **देशी नावों** से संचालित होता रहा। व्यापार हमेशा जलमार्गों को प्राथमिकता देता था। अनुमान है कि **अठारहवीं शताब्दी में बंगाल की देशी नावों की फ्लीट में लगभग 30,000 नाविक** काम करते थे।

इन नावों की क्षमता 5 से 60 टन तक थी और लंबाई 25 से 90 फीट तक थी। ये **कोलकाता से इलाहाबाद तक लगभग 800 मील की दूरी** को **औसतन 75 दिनों** में तय करते थे, और प्रति यात्रा **रु. 150 से 650** तक शुल्क लेते थे। यह यात्रा खतरनाक थी और कोलकाता की **नदी बीमा कंपनियाँ आमतौर पर 3.5% प्रीमियम** लेती थीं, जो कोलकाता-लंदन माल पर भी लागू था।

"फिर भी, सभी सहमत थे कि नदी यात्रा ज़मीन से यात्रा करने की तुलना में आसान थी, इसलिए गंगा लंबे समय तक पसंदीदा मार्ग रही।"

ज़मीनी मार्ग कभी-कभी तेज़ होने के बावजूद, हमेशा जलमार्गों की तुलना में महंगा और असुविधाजनक रहा। 1830 के दशक में, भारतीय सर्वेक्षण के आर्मस्ट्रॉन्ग ने गणना की कि यदि वह **फतेहगढ़ से कोलकाता** तक ज़मीन मार्ग से अपने परिवार को ले जाते, तो इसकी लागत **रु. 230 अधिक** होती।

1840 के दशक में, भले ही भारत में **स्टीमबोट** का परिचय हो चुका था, लेकिन पुराने भारतीय नावों को अपने स्टीम संचालित प्रतिद्वंद्वियों की तुलना में सस्ता माना जाता था। 1849 में, पुराने भारतीय नावों की कीमत **ज़मीन मार्ग की तुलना में 2 से 2.5 गुना कम** थी। इन नावों द्वारा एक टन माल को एक मील दूरी तक ले जाने की लागत **नीचे की धारा में 1.2 पेंस** और **ऊपर की धारा में 1.6 पेंस** थी; स्टीमर और ज़मीन मार्ग की लागत क्रमशः 2.1 पेंस और 3.1 पेंस थी।

BITDS ने सभी "मुख्य बाजारों" में **कस्टम हाउस** खोले, ताकि पूरे आंतरिक व्यापार को इस प्रणाली के अंतर्गत लाया जा सके। वास्तव में, चूंकि व्यापार **जलमार्गों को प्राथमिकता देता था**, अधिकांश BITDS चेकपोस्ट जलमार्गों के किनारे स्थित थे।

"बंगाल-बिहार व्यापार का सबसे बड़ा हिस्सा गंगा नदी पर है, और इसमें कम से कम **10 कस्टम हाउस और 30 चेकपोस्ट** हैं, इसलिए यह सबसे अधिक बाधित है। गंगा के दोनों किनारों पर विशाल क्षेत्र ऐसे हैं जहाँ कस्टम हाउस नहीं हैं, ताकि बंगाल-बिहार व्यापार को कम से कम असुविधा हो।"

हालाँकि ट्रांजिट ड्यूटी केवल यात्रा की शुरुआत में देय थी, परंतु **गंतव्य तक माल कई विलंब और अतिरिक्त शुल्कों के अधीन** था, क्योंकि उन्हें चेकपोस्ट श्रृंखला के माध्यम से गुजरना पड़ता था। इससे भारतीय व्यापारियों की लागत अत्यधिक बढ़ गई।

भले ही जलमार्गों की प्राथमिकता थी, लेकिन भारतीय व्यापारी अक्सर **"बेहद गरीब और असुविधाजनक नावों"** का उपयोग करते थे, जो बरसात और नमी से भी प्रभावित होती थीं। माल को जल रिसाव और चोरी से नुकसान होता था, आगमन की अनिश्चितता और यात्रा की धीमी गति के कारण अतिरिक्त कठिनाई होती थी।

इन परिस्थितियों में, BITDS के **अतिरिक्त खर्च ने व्यापार को जलमार्ग से ज़मीन मार्ग की ओर मोड़ दिया**, जो वैसे भी महंगा था। पाटना के कमिश्नर लैम्बर्ट ने लिखा:

"रोक-टोक और नुकसान के कारण, बड़ी मात्रा में माल को भारी लागत पर कार्टों में कोलकाता से बनारस और पश्चिमी प्रांतों तक ले जाया जाता है (जिसे मैंने स्वयं कई बार देखा है), जलमार्ग द्वारा सस्ते परिवहन के विकल्प की बजाय।"

इस प्रकार, BITDS का **अप्रत्यक्ष परिणाम** यह था कि **भारतीय व्यापारियों की परिवहन लागत और बिक्री मूल्य दोनों काफी बढ़ गए।**

अठारहवीं और उन्नीसवीं शताब्दी की शुरुआत में भारत में ब्रिटिश द्वारा अर्जित लगभग सभी **व्यापारिक मुनाफे भारत में आयात से नहीं बल्कि निर्यात से** हुए थे। इंग्लैंड से भारत की ओर भेजा जाने वाला माल अधिकतर **मालवाहन स्थान भरने के लिए** होता था, न कि किसी लाभ कमाने के उद्देश्य से।

भारत की ओर जाने वाली नावों में माल **पूर्व अनुमति के बिना** लादने की अनुमति थी, जबकि इंग्लैंड की ओर जाने वाली नावों में **पूर्व अनुमति आवश्यक** थी।

"इस आधार पर निष्कर्ष निकालना उचित है कि इस तरह लादे गए वस्त्र न तो किसी व्यापारिक लाभ देते थे और न ही उनसे कोई लाभ की अपेक्षा की जाती थी, सिवाय इसके कि ये मालवाहन शुल्क के रूप में कुछ लाभ दे सकते थे। वास्तव में, भारत में बिक्री के योग्य किसी भी वस्तु की प्राप्ति इतनी कठिन थी कि कुछ पक्षदाताओं को अपने जहाजों में **खाली कांच की बोतलें और अन्य नगण्य वस्तुएँ** भरने की विवशता पड़ती थी।"

कंपनी का इंग्लैंड की ओर जाने वाले माल के लिए मालवाहन शुल्क नियमित जहाजों में **£32 प्रति टन** और

अतिरिक्त जहाजों में **£27 प्रति टन** था, जबकि भारत की ओर जाने वाले माल का शुल्क काफी कम था—**नियमित जहाजों में £12 प्रति टन** और **अतिरिक्त जहाजों में £9 प्रति टन।**

फिर भी, 1793-94 से 1805-06 तक के बारह वर्षों में, भारत की ओर कुल माल केवल **6,552 टन** दर्ज किया गया, जबकि इंग्लैंड की ओर कुल माल **162,963 टन** था।

1793 में, भाप इंजन के आगमन से पहले, **लंदन से भारत तक ब्रिटिश उत्पादों के परिवहन की कुल लागत** उनके ब्रिटेन में मूल्य का केवल **3 प्रतिशत** थी।

इस प्रकार, ब्रिटेन की **व्यापारिक और नौसैनिक श्रेष्ठता** ने ब्रिटिश व्यापारियों को **ब्रिटिश माल की बिक्री में अत्यधिक प्रतिस्पर्धात्मक लाभ** प्रदान किया, भले ही समुद्री भाप के उपयोग से पहले ही।

भाप इंजन का आगमन केवल भारतीय व्यापारियों के लिए **ऐतिहासिक रूप से उत्पन्न असुविधाजनक स्थिति** को और बिगाड़ गया।

ये तीनों कारक असल में अलग नहीं किए जा सकते क्योंकि ये सभी **ब्रिटिश बुर्जुआ वर्ग के ऐतिहासिक विजय यात्रा के संकेत और परिणाम** थे।

BITDS से राजस्व

स्पष्ट रूप से, ब्रिटिश भारत सरकार को प्राप्त **राजस्व** भारतीय व्यापारियों और यात्रियों पर BITDS के **आर्थिक भार** की तुलना में बहुत कम था। 1819-20 में बंगाल के BITDS से प्राप्त सकल राजस्व को बंगाल के कुल सकल राजस्व का लगभग **11 प्रतिशत** और 1828-29 में **10 प्रतिशत** माना गया।

बोर्ड ऑफ कस्टम्स के राजस्व डेटा में विभिन्न क्षेत्रों के लिए अलग रुझान दिखते हैं:

- मिर्ज़ापुर के लिए, 1820-21 से 1831-32 तक **लगातार और उल्लेखनीय रूप से तेज़ गिरावट** दर्ज की गई।
- बांदा के लिए, 1810-11 से 1832-33 के बीच **पूर्ण चक्र और फिर उभार** देखा गया।
- BITDS से रिपोर्ट किए गए कुल राजस्व के लिए भी यही प्रवृत्ति लागू होती है।

बोर्ड ऑफ कस्टम्स ने 1818-19 से 1832-33 तक की अवधि के लिए BITDS से **औसत वार्षिक शुद्ध राजस्व** को लगभग **3.5 मिलियन रुपये** बताया। हालांकि, इन आंकड़ों और इस विषय के सभी डेटा की **कवरेज अस्थिर और विश्वसनीयता सीमित** है।

1825 में, **होल्ट मैकेंजी** ने BITDS के उन्मूलन से होने वाले **शुद्ध राजस्व हानि** का अनुमान कुल ब्रिटिश भारत के वार्षिक राजस्व का **5 प्रतिशत से कम** बताया। उन्होंने कहा:

"यदि आंतरिक शुल्क हटा दिए जाएँ, और निर्यात-आयात शुल्क में कोई बदलाव न किया जाए, तो तत्काल राजस्व हानि लगभग £330,000 होगी। और यदि पश्चिमी नमक पर शुल्क बनाए रखा जाए, तो भी हानि £220,000 होगी। इसका पूरा नुकसान तुरंत समुद्र मार्ग से आयात और निर्यात पर नए शुल्क लगाने से नहीं भरा जा सकता, लेकिन इसका एक हिस्सा निश्चित रूप से भरा जा सकता है। चूंकि प्रस्तावित व्यवस्था व्यापार को बढ़ावा देने के लिए काम करेगी, इसलिए इसे शुद्ध हानि के रूप में नहीं गिना जा सकता।"

इस प्रकार, BITDS ब्रिटिश भारत सरकार के लिए **सीमित महत्व का राजस्व स्रोत** था। संभवतः 1793 में BITDS प्रशासन का **राजस्व विभाग से वाणिज्य विभाग में स्थानांतरण** केवल एक नौकरशाही विवरण नहीं था, बल्कि इसके पीछे व्यावहारिक कारण भी थे।

BITDS का प्रभाव

BITDS और इसके साथ जुड़े परिदृश्य ने उस **अविश्वसनीय, रहस्यमय और दासत्वपूर्ण भारतीय चरित्र** के लिए मंच तैयार किया, जिसे उपनिवेशकालीन अंग्रेजी साहित्य में बड़े चाव से दर्शाया गया। भारतीय व्यापारी और यात्री BITDS से बचाव को **जीवन की अनिवार्यता** के रूप में अपनाने लगे। वास्तव में, इस कठोर प्रणाली के तहत जो भारतीय व्यापार जीवित रहा, वह बड़े पैमाने पर उस **चालाकी और गुणसूत्रिता** का स्मारक था, जिसके लिए उपनिवेशिक लेखक भारतीय चरित्र की निंदा करते थे।

1776 में, मैकरेबी ने अंग्रेज़ से बात करते हुए एक भारतीय की कही गई बात सुनी:

"हाँ, हाँ, बिल्कुल सही, जो मालिक कहते हैं, मेरी राह, बुरी राह, मालिक का हिसाब सही।"

BITDS की चोरी-छिपे बचने की कोशिशों को रोकने का प्रयास BITDS प्रशासन के **असीमित विस्तार** के सिद्धांत को लागू करता था। नए चेकपोस्ट खोलने का अधिकार अक्सर स्थानीय राजस्व संग्रहकर्ता द्वारा ही प्रयोग किया जाता था, बिना बोर्ड ऑफ कस्टम्स की स्वीकृति या जानकारी के।

"हर नया व्यापारिक मार्ग नए चेकपोस्ट की मांग करता है, और जैसे-जैसे व्यापार खुद को इन प्रतिबंधों से बचाने के लिए नए मार्ग ढूँढता है, चाहे वे कितने भी हों, इसका परिणाम चेकपोस्टों का असीमित विस्तार होता है।"

जैसा कि पहले बताया गया, भारतीय व्यापारियों को BITDS से बचने के लिए **सस्ते जलमार्गों से महंगे स्थलीय मार्गों** की ओर शिफ्ट होना पड़ा। लेकिन इन्हीं स्थलीय मार्गों में भी लगातार बदलाव करना पड़ा।

मद्रास के अध्ययन के अनुसार:

"शुल्क की दर और उनके लिए चुने गए स्टेशन आंशिक रूप से प्रथा और आंशिक रूप से (ट्रांजिट-ड्यूटी) फ़ार्मर के विवेक द्वारा निर्धारित थे। स्टेशन बहुत अधिक थे, दस मील से कम दूरी पर, और प्रत्येक स्टेशन पर शुल्क देना आवश्यक था। लेकिन व्यापार कृषि की तुलना में आसानी से मर या डर सकता है, इसलिए ट्रांजिट-ड्यूटी के फ़ार्मर भूमि-राजस्व अधिकारियों की तुलना में कम दमनकारी थे।"

इस शोध का उद्देश्य **BITDS और भूमि-राजस्व फ़ार्मरों द्वारा लगाए गए दमन** के तुलनात्मक स्तर की जांच नहीं है, लेकिन स्पष्ट है कि BITDS ने कई पारंपरिक मार्गों से व्यापार को **"मार" या "डराने"** का काम किया।

इसका परिणाम यह हुआ कि **नई मंडियाँ** उभरने लगीं, जैसे:

- दिल्ली क्षेत्र में: भिवानी और रेवाड़ी
- दोआब में: शामली और हाथरस
- बुंदेलखंड में: कुँच
- इलाहाबाद क्षेत्र में: सीर्सा और जूसी
- हुगली क्षेत्र में: खुलुआ

दूसरी ओर, मिर्ज़ापुर में BITDS से प्राप्त राजस्व 1820-21 से 1832-33 के बीच **दो-तिहाई कम** हो गया।

व्यापार ने BITDS से मुक्त गैर-ब्रिटिश यूरोपीय बस्तियों का लाभ उठाने की कोशिश भी की। हालांकि, 1811 में विदेशी जहाज़ों को भारत के तटीय व्यापार से रोकने के कारण इस विकल्प का महत्व कम हो गया। इसके अलावा, इन बस्तियों की स्वतंत्रता केवल समुद्री व्यापार तक सीमित थी। उदाहरण के लिए, श्रीरामपुर और चंद्रनगर को हुगली के माध्यम से समुद्र के लिए स्वतंत्र मार्ग का अधिकार था, लेकिन उनके सभी आंतरिक व्यापार पर, विदेशी जहाज़ों पर लागू दरों के अनुसार कर लगाया जाता था।

कपड़े का निर्यात:

- ब्रिटिश भारत में निर्मित: 2.5%
- नेपाल या अवध में निर्मित: 5%

सूती धागे का निर्यात:

- यूरोप या अमेरिका: 5%
- अन्य स्थानों के लिए: 15%

हर मामले में, ये शुल्क **कोलकाता से ब्रिटिश जहाज़ों में निर्यात पर लगाए जाने वाले शुल्क से दोगुने** थे।

विदेशी बस्तियों को BITDS चेकपोस्टों से घेरा गया था; उदाहरण के लिए:

- 1815–1835 के बीच, श्रीरामपुर में केवल एक जहाज़ आया
- चंद्रनगर में कोई जहाज़ नहीं आया

फिर भी, चेकपोस्ट बनाए रखे गए ताकि **"विदेशी जहाज़ों में व्यापार"** पर शुल्क लिया जा सके।

- **BITDS का ब्रिटिश व्यापार पर प्रतिस्पर्धात्मक लाभ**
- मौजूदा डेटा से यह सही-सही अनुमान लगाना संभव नहीं है कि BITDS ने भारतीय अर्थव्यवस्था में ब्रिटिश व्यापारियों और ब्रिटिश वस्त्रों को अपने प्रतिस्पर्धियों पर कितना लाभ दिया। हालांकि इसमें कोई संदेह नहीं है कि यह लाभ **अत्यंत महत्वपूर्ण** था।
- **बोर्ड ऑफ कस्टम्स** मानता था कि BITDS के समाप्त होने से **भारतीय व्यापार और उद्योग का विस्तार** होगा, लेकिन राजस्व के कारण इस कदम की सिफारिश करने से इनकार कर दिया। वास्तव में, बोर्ड ने **गवर्नर जनरल ऑकलैंड** के 1 मार्च और 1 मई 1836 के आदेशों द्वारा बंगाल में BITDS समाप्त करने पर **खेद व्यक्त किया**।
- Trevelyan रिपोर्ट के विस्तृत उत्तर में, बोर्ड ने यह नहीं नकारा कि BITDS के कारण **ब्रिटिश भारत की**

अर्थव्यवस्था में विनिर्माण का सापेक्ष हिस्सा घट गया। इसके अलावा, बोर्ड ने कुछ भारतीय उद्योगों के खिलाफ **भेदभावपूर्ण उपायों** को सही ठहराने की कोशिश की, यह दावा करते हुए कि इन उद्योगों की मदद करना भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए **असामयिक (atavistic)** होता। उन्होंने कहा:

- "हम यहाँ ग्राम्य चरखा उद्योग की बात नहीं कर रहे—यह हास्यास्पद है यह मानना कि वे इंग्लैंड या भारत में पावरलूम के खिलाफ प्रतिस्पर्धा कर सकते हैं। निश्चित रूप से हमारा कोई विचार नहीं है कि उनके संरक्षण के लिए ट्रांजिट ड्यूटी या कोई अन्य व्यवस्था बनाई जाए और उसका बोझ समाज पर पड़े।"
- बोर्ड ने यह भी नहीं नकारा कि BITDS ने **क्षेत्रीय श्रम विभाजन** को हतोत्साहित किया, लेकिन उन्होंने पूछा:
- "भारतीय कपड़े के निर्माता कॉटन-कंट्री में अपने उद्योग क्यों नहीं स्थापित करते? अमेरिका में कौन सा व्यक्ति जो इन्डिगो बनाना चाहता है, अपना कारखाना मैसाचुसेट्स में स्थापित करेगा बजाय साउथ कैरोलिना या जॉर्जिया के?"
- यह भी स्वीकार किया गया कि BITDS ने **बड़े पैमाने और ऊर्ध्वाधर एकीकृत उत्पादन की लाभप्रदता** को कम किया, लेकिन तर्कसंगत प्रश्न पूछा गया:
- "चोकियों के घेरे के भीतर किसी कारखाने की स्थापना करने की क्या वास्तविक आवश्यकता है...? विनिर्माण उद्योग अक्सर शहर में मिलने वाले संरक्षण और लाभ की तलाश करता है, लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि वे स्वाभाविक रूप से विनिर्माण उद्योग के केंद्र हैं।"
- **BITDS पर बोर्ड ऑफ कस्टम्स और Trevelyan की राय**
- सामान्य रूप से, **बोर्ड ऑफ कस्टम्स** ने Trevelyan पर आरोप लगाया कि उन्होंने तथ्य को बढ़ा-चढ़ाकर पेश किया, भले ही बोर्ड मानता था कि **BITDS ने भारतीय व्यापार और उद्योग को प्रभावित किया और उसमें गिरावट आई**। सिस्टम को बनाए रखने की वकालत पूरी तरह **राजस्व के आधार पर** थी, लेकिन जैसा कि पहले चर्चा हुई, **BITDS का राजस्व स्रोत के रूप में महत्व बहुत सीमित** था।
- BITDS का **मुख्य प्रभाव** कई वस्तुओं की कीमतें इतनी बढ़ा देना था कि वे "**शुल्क की मात्रा से कहीं अधिक**" थीं, और इस तरह यह **भारतीय व्यापार और उद्योग के पतन को तेज करने** वाला था। Trevelyan ने शिकायत की:
- "कम से कम हमारे पास यह शक्ति है कि हम भारतीय विनिर्माण उद्योग को उन बोझों और प्रतिबंधों से दबाकर असमानता को बढ़ावा न दें, जिनसे हमारी मातृभूमि का उद्योग खुशी-खुशी मुक्त है। जब दोनों को सरकारी नियमों के तहत समान लाभ मिलेगा, न्याय और मानवता की मांग पूरी होगी, और हमारे देश पर यह दोष नहीं लगेगा कि हमने अपने स्वार्थ के लिए भारतीय उद्योग के प्राकृतिक पतन को तेज किया।"
- Trevelyan की यह **ईसाई भोलेपन भरी चिंता** ब्रिटिश साम्राज्य के भारत में रहने के **मूल उद्देश्य** को समझ नहीं पाई, हालांकि उनके द्वारा एकत्र किए गए प्रमाण एक सरल निष्कर्ष की ओर इशारा करते हैं।
- इसके विपरीत, **बोर्ड ऑफ कस्टम्स** ने **ब्रिटिश हितों और भारत में घटित घटनाओं** के बीच एक महत्वपूर्ण संबंध स्थापित किया। आयात और उनके भारतीय विकल्पों पर भेदभावपूर्ण कराधान पर टिप्पणी करते हुए बोर्ड ने कहा:
- "(Trevelyan) रिपोर्ट में आंतरिक शुल्क और आयात शुल्क के बीच जो अनियमितता देखी गई है, वह वास्तविक और गंभीर बुराई है, लेकिन यह ब्रिटिश विधानमंडल द्वारा देश पर थोप दी गई थी।"
- इसी तर्ज पर, Holt Mackenzie ने लिखा:
- "अब तक, घर में अधिकारी और इंग्लैंड में व्यापारी वर्ग मुख्य रूप से इस उद्देश्य पर ध्यान केंद्रित कर रहे थे कि U.K. के उद्योगों के लिए बाजार खोजा जाए।"

सारांश

स्पष्ट है कि **BITDS** ने भारत में ब्रिटिश **व्यापारिक और औद्योगिक हितों** का संगम प्रदान किया। **व्यापारिक युग** के दौरान, यह बोझिल और दमनकारी प्रणाली भारतीय व्यापार को **सापेक्ष रूप से गैर-आर्थिक और कभी-कभी भौतिक रूप से असंभव** बना देती थी, जिससे भारतीय बाजार धीरे-धीरे ब्रिटिश व्यापारियों के **एकाधिकार नियंत्रण** के अधीन हो गया।

चार्टर एक्ट 1813 ने औपचारिक रूप से व्यापारी युग को समाप्त किया और भारत में ब्रिटिश **औद्योगिक बुर्जुआ वर्ग** का युग शुरू किया। अब, BITDS ने न केवल **भारतीय व्यापार** बल्कि **भारतीय उद्योग** की भी **लाभप्रदता और व्यवहार्यता** को कम कर दिया।

इसके परिणामस्वरूप, भारतीय बाजार का **स्थानीय उत्पादों से ब्रिटिश उत्पादों की ओर भारी और कभी-कभी पूर्ण बदलाव** केवल उनके उत्पादन और विपणन की लागत के अंतर के कारण नहीं हुआ, बल्कि उन **ऐतिहासिक परिस्थितियों** के कारण भी हुआ, जो ब्रिटिश उत्पादों के भारत में परिचय के समय मौजूद थीं।

यद्यपि यह परिवर्तन अद्भुत था, **BITDS केवल उन परिस्थितियों का एक पहलू** था, जो ब्रिटेन के भारत में साम्राज्यवादी उद्देश्य की पूर्ति के माध्यम से उत्पन्न हुई थीं। वास्तव में, **BITDS ऐतिहासिक रूप से किसी ब्रिटिश नवाचार के रूप में नहीं बल्कि एक मूल भारतीय प्रणाली के रूप में विशेष है**, जिसे ब्रिटिशों ने इस नए उद्देश्य के लिए अपनाया: **ब्रिटिश भारत को ब्रिटिश व्यापारियों और ब्रिटेन में निर्मित उत्पादों के लिए एक बंद बाजार बनाना।**

यह लक्ष्य तब तक हासिल कर लिया गया था जब ब्रिटिश शासक वर्ग ने इस प्रणाली की अन्यायपूर्ण प्रकृति को पहचाना और ब्रिटिश भारत को **एक स्वतंत्र और एकीकृत बाजार** में बदलने का निर्णय लिया।

References:

- पी. बनर्जी, *इंडियन फाइनेंस*, (लंदन, 1928), पृष्ठ 209।
- *केम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इंडिया*, खंड V, पृष्ठ 467।
- बोर्ड ऑफ कस्टम्स, *चार्ल्स ट्रेवल्यान की रिपोर्ट पर टिप्पणियाँ – इंडियन कस्टम्स और टाउन ड्यूटीज़, बंगाल प्रेसिडेंसी*, (कोलकाता, 1835); आगे इसे *ट्रेवल्यान रिपोर्ट* कहा गया।
- आर. सी. दत्त द्वारा उद्धृत, *इंडिया इन द विक्टोरियन एज*, (लंदन, 1904), पृष्ठ 305।
- बोर्ड ऑफ कस्टम्स से बेंटिनक को पत्र, *ट्रेवल्यान रिपोर्ट* के परिशिष्ट में पुनः प्रकाशित।
- चार्ल्स ट्रेवल्यान, *टाउन ड्यूटी रिपोर्ट*, उसी खंड में बंधा हुआ जैसे ट्रेवल्यान रिपोर्ट।
- आर. सी. दत्त, *इकोनॉमिक हिस्ट्री ऑफ इंडिया अंडर अर्ली ब्रिटिश रूल*, (लंदन, 1932), पृष्ठ 304।
- कलकत्ता के व्यापारियों का याचिका, एच. एम. पार्कर, सचिव, बोर्ड ऑफ कस्टम्स, 17 दिसंबर, 1831; *ट्रेवल्यान रिपोर्ट* के परिशिष्ट में पुनः प्रकाशित।
- बोर्ड ऑफ कस्टम्स से बेंटिनक को पत्र, *ट्रेवल्यान रिपोर्ट* में पुनः प्रकाशित।
- एम. एस./कर्नल रॉबर्ट किड से विलियम ब्रुअरे को पत्र, 16 अप्रैल, 1787, बंगाल रेवेन्यू कंसल्टेशंस, होम मिक्स्ड सीरीज 799, पृष्ठ 79-84।
- एस. सी. हिल, *कैटलॉग ऑफ द HM सीरीज ऑफ द इंडिया ऑफिस रिकॉर्ड्स*, (लंदन, 1927), पृष्ठ 525।
- कप्तान रैनीज़, पत्र अगस्त 1756, आई. डी. पार्शद द्वारा उद्धृत, *सॉम एस्पेक्ट्स ऑफ इंडिया'स फॉरेन ट्रेड, 1757-1893*, (लंदन, 1932), पृष्ठ 11।
- आई. डी. पार्शद द्वारा उद्धृत, *इंडिया'स फॉरेन ट्रेड*, पृष्ठ 35।
- संसदीय पत्र, हाउस ऑफ कॉमन्स, सेलेक्ट कमिटी, चौथा रिपोर्ट, 1812, परिशिष्ट 47, सप्लीमेंट (आगे इसे pp/SCHC कहा गया)।
- डब्ल्यू. एच. कैरी, *द गुड ओल्ड डेज ऑफ द ऑनरेबल जॉन कंपनी*, (लंदन, 1907), खंड II, पृष्ठ 16।
- एन. कैम्पबेल, *द कस्टम हाउस वेद-मे-कम*, (कोलकाता, 1849), पृष्ठ 224।
- आई. डी. पार्शद, *इंडिया'स फॉरेन ट्रेड*, पृष्ठ 37-38।